Pag-1 मुस्तफा कमाल पाशा Core-14

Contribution of Mustafa Kamal Pasha

Phon→9113389993

मुस्तफा कमाल पाशा के नेतृत्व में तुर्की का आधुनिकीकरण आधुनिक इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है। वह देश जो प्रथम विश्व-युद्ध के पूर्व आधुनिक यूरोप का मरीज माना जाता था, युद्धोपरान्त भला-चंगा होकर एक सशक्त राष्ट्र के रूप में सामने आया। तुर्की का कायाकल्प करने और उसे एक सर्वथा नूतन जीवन देने का सारा श्रेय मुस्तफा कमाल पाशा को है। इसी कारण उसे "आधुनिक तुर्की का जनक (अतातुर्क)" कहा जाता है।

पिता अली रजा एफन्दी के घर 1881 में जन्मे मुस्तफा कमाल पाशा एक साधारण परिवार से सम्बन्ध रखता था। माता के इच्छा के विपरीत कमाल सैनिक स्कूल में भर्ती हुआ और शिक्षा के उपरान्त एक सैनिक अधिकारी के रूप में अपने जीवन की शुरुआत की। उसने हर सैनिक अभियान में सफलता पायी।

प्रथम विश्व-युद्ध में तुर्की भी केन्द्रीय राष्ट्रों के साथ पराजित हुआ और सेव्र परिणाम स्वरूप तुर्की पर सेव्र की अपमानजनक संधि लाद दी गयी। ऐसी परिस्थिति में मुस्तफा जैसा स्वाभिमानी जनरल इस संधि को मानने के लिए तैयार नहीं था। कमाल पाशा ने अपने देशवासियों में देशभक्ति तथा स्वाभिमान का नया मन्त्र फूंका। उसके नेतृत्व में लोगों में अपूर्व जागरण का संचार हुआ और वे सेव्र की अपमानजनक संधि का विरोध करने के लिए तैयार हो गये। इसके लिए कमाल पाशा के नेतृत्व में उन्होंने युद्ध किया और दुश्मनों को परास्त कर "लोजान की संधि" करने के लिए बाध्य किया। ~~निष्कर्ष~~, इसके फलस्वरूप तुर्की को अंतर्राष्ट्रीय मान्यता मिल गयी और युद्ध में पराजय का अपयश धुल गया। 29 अक्टूबर 1923 को तुर्की को एक गणराज्य घोषित ~~किया~~ किया गया। मुस्तफा कमाल पाशा इस गणराज्य का राष्ट्रपति बना और इस पद पर वह अपनी मृत्युपर्यन्त (10 नवम्बर 1938) तक बना रहा।

देन→ तुर्की गणराज्य को एक संविधान देने के बाद मुस्तफा कमाल जी-जान से तुर्की के नव-निर्माण में लग गया। अगले पन्द्रह वर्षों तक वह इसी कार्य

तरह से [illegible]

(i) जनतन्त्रवाद (ii) राष्ट्रवाद (iii) [illegible] अर्थवाद (v) धर्मनिरपेक्षवाद तथा (vi) क्रांतिवाद।

(1) जनतंत्रवाद → कमाल अतातुर्क की आत्मा लोकतन्त्र की भावना से ओत-प्रोत थी। यह तुर्की में गणराज्य स्थापित कर खिलाफत और सुल्तानियत का अन्त कर दिया। नया संविधान लागू किया गया और संविधान में जनता की संप्रभुता को सर्वोच्च स्थान दिया गया। कार्यपालिका को संसद के प्रति उत्तरदायी बनाया गया। संविधान में मूल अधिकारों को स्थान दिया गया एवं व्यक्तिगत राजनीतिक, आर्थिक अधिकारों तथा विचारों की स्वतंत्रता पर जोर दिया गया।

(2) राष्ट्रवाद → मुस्तफा कमाल पाशा स्वयं एक राष्ट्रवादी था और उसका विश्वास था कि तुर्की गणराज्य की उन्नति के लिए तुर्क लोगों में राष्ट्रीयता की भावना जागृत परम आवश्यक है। तुर्की राष्ट्रीयता के विकास के लिए पश्चिमीकरण को आवश्यक मानता था लेकिन यह तभी सम्भव था, जबकि प्राचीन रूढ़ियों से पूर्णतया सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया जाये। इस उद्देश्य से प्रेरित होकर कमाल पाशा ने सुधारों का विस्तृत कार्यक्रम बनाया, जो कि -

(i) शिक्षा-सम्बन्धी सुधार → राष्ट्रीयता की भावना विकसित करने के लिए शिक्षा की अच्छी व्यवस्था अत्यन्त आवश्यक होती है। तुर्की में अभी जो शिक्षा-पद्धति थी उसका आधार धार्मिक था और इस पद्धति के अन्तर्गत रूढ़िवाद और अंधविश्वास का ही बोल-बाला था। अतएव, शिक्षा-पद्धति में आमूल परिवर्तन करना आवश्यक था। कमाल पाशा ने तुर्की में शिक्षा-पद्धति की शुरुआत की। देशभर में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य और निःशुल्क कर दी। अतः शिक्षा का कार्य

(IV) उपस्त्रियों की स्थिति में सुधार → तुर्की में महिलाओं की स्थिति अत्यन्त हीन थी। उन्हें कोई राजनीतिक या सामाजिक अधिकार प्राप्त नहीं था। तुर्की के विकास में कमाल पाशा महिलाओं का पूरा सहयोग प्राप्त करना चाहता था। अतएव, कमाल ने परदा प्रथा का अन्त, औरतों के लिए पृथक स्कूलों (स्कूल), वैवाहिक पद्धति में आमूल-परिवर्तन तथा सिविल मैरेज की पद्धति को लागू की (17 वर्ष की उम्र की लड़कियों का विवाह वर्जित आदि काम किये) राजनीतिक क्षेत्र में स्त्रियाँ ~~स्त्रियाँ~~ अर्थात नारियों को मत देने का अधिकार देकर उन्हें भी संसद में पहुँचने का रास्ता भी खोल दिया।

(V) वेशभूषा में सुधार → कमाल पाशा तुर्की के लोगों की पोशाक में आमूल परिवर्तन करना चाहता था। इस क्षेत्र में वह यूरोपीय परिधान का पोषक था 25 नवम्बर 1925 को एक कानून द्वारा व्यक्तियों के टोपी फेज पहने तथा बुरका धारण करने की मनाही कर दी तथा उनके लिए ~~हैट पहना~~ यूरोपीय पोशाक पहनने, कोट-पैंट पतलून धारण करने तथा टाई का प्रयोग करने, की आज्ञा निकाल दी। कमाल पाशा के इस कदम से मुस्लिम जगत में शोर मच गया। क्योंकि इसका अर्थ फेज टोपी फेज बिना परम्परागत रूप से नमाज अदा

... , (...) स्नातक आदि सुधारिक करते हैं। ... , पंच-वर्षीय योजना लागू की गयी। 1933 में प्रथम पंच- आर्थिक नियंत्रण और आर्थिक सुविधा के लिए नोट छापने के लिए केन्द्रीय बैंक, उद्योग-धंधों के संचालन के लिए सुमेर बैंक, व्यवसायों के संचालन के लिए इस बैंक तथा सिंचाई के विकास के लिए कृषि बैंक खोले गये।

(5) धर्म-निरपेक्षवाद → यहाँ गणतंत्र धर्म निरपेक्ष राज्य घोषित कर दिया गया। यहाँ का सुल्तान धर्माचार्य माना जाता था, परन्तु अब उसका पद समाप्त कर दिया गया। मुल्ला-मौलवियों के विशेष अधिकार समाप्त कर दिये गये। इस प्रकार सभी नागरिकों के लिए एक स्वतंत्र रूप से अपने धार्मिक क्रिया-कलाप का अवसर प्राप्त हुआ।

(6) क्रांतिवाद → कमालपाशा का अन्तिम और छठा सिद्धान्त था क्रांतिवाद जिसके अनुसार उसने तुर्की में क्रांतिकारी भावनाओं के विकास के लिए निरन्तर प्रयास किया। रूढ़िवाद से सुधारों के कार्यों में रुकावट होती है। अतएव, वह जनता में प्रचार कार्य के द्वारा क्रांतिकारी भावनाओं को भरता रहा।

निष्कर्ष → इस तरह, इन छः सिद्धान्तों के आधार पर मुस्तफा कमाल पाशा ने तुर्की को एक नया जीवन प्रदान किया कर दिया और एक मरा हुआ राष्ट्र संसार की मण्डली में फिर उठकर चलने लगा।

ऐसी बात नहीं थी कि कमाल पाशा के इन कार्यों का तुर्की में विरोध नहीं हुआ था और ऐसा भी नहीं था कि कोई इसके पहले ऐसा प्रयास नहीं किया था लेकिन पहले के धर्म-सुधारकों या समाज-सुधारकों को धर्म या समाज की कड़ी चट्टान जा अड़े इरादे तोड़ कर गिरा देते थे, लेकिन कमाल पाशा के इरादे लोहे के बने थे और उसने उल्टे इन रूढ़िवादी चट्टानों को तोड़कर चकनाचूर कर दिया और विश्व इतिहास में यहाँ तुर्की को एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में परिणत कर दिया। निःसन्देह मुस्तफा कमाल पाशा तुर्की के जनक (अतातुर्क) थे तथा तुर्की के इतिहास में सदा चिरस्मरणीय रहेगा।

प्रश्न 8 – भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सुभाषचन्द्र बोस और उनके आजाद हिन्द फौज की भूमिका का मूल्यांकन करें।

उत्तर ⇒ भारतीय राजनीति में 1942–45 ई० तक का समय निष्क्रिय निश्चित राजनीति का समय था। इस दौरान देश के प्रमुख नेता जेलों में बन्द थे सरकार युद्ध में व्यस्त थी। जनता को नेतृत्व प्रदान करने वाला कोई नहीं था। अतः छिटपुट घटनाओं के अतिरिक्त भारत में कोई महत्वपूर्ण घटना भारत में नहीं घटी। इसका यह मतलब नहीं है कि अंग्रेजों का विरोध समाप्त हो गया था। इस विरोध के सक्रिय स्वरूप सुभाषचन्द्र बोस दे रहे थे।

सुभाष की जीवनी एवं कार्य ⟶

सुभाषचन्द्र बोस भारतीय स्वतंत्रता संग्राम और गांधी युग के एक महान नेता थे। इनका जन्म 23 जनवरी, 1897 ई० को कटक में हुआ था। वे एक कुशाग्र बुद्धि वाले एवं मेधावी छात्र थे। वे आई० सी० एस० की परीक्षा में सफल भी हुए परन्तु देश-प्रेम की भावना से प्रेरित होकर और अंग्रेजी प्रजातीय विभेद की नीति से क्षुब्ध होकर उन्होंने अंग्रेजी नौकरी छोड़ दी। वे देशबन्धु चितरंजन दास के प्रभाव में आकर वे देश सेवा के कार्य में लग गए। धीरे-धीरे वे काँग्रेस की तरफ आकर्षित हुए। धीरे-धीरे वे काँग्रेस के एक प्रभावी नेता बन गए। बोस और नेहरु काँग्रेस के वामपंथी दल का प्रतिनिधित्व करते थे। बोस ने स्वराज्य दल के गठन और उसके प्रचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। गांधी इरविन समझौता और नेहरु रिपोर्ट से वे अप्रसन्न थे। नेहरु रिपोर्ट का विरोध करने के लिए उन्होंने इंडिपेन्डेन्ट लीग बनायी। उन्होंने साइमन कमीशन बहिष्कार के प्रश्न पर गांधी की नीतियों की कटु आलोचना की। वैचारिक मतभेदों के कारण गांधी और नेहरु के संबंध बिगड़ते जा रहे थे। इसी पृष्ठभूमि में 1939 ई० में काँग्रेस का अधिवेशन त्रिपुरी में हुआ। गांधीजी पट्टाभि सीतारमैया को काँग्रेस अध्यक्ष बनवाना चाहते थे। वामपंथी सुभाषचन्द्र बोस के पक्ष में थे। फलतः दोनों के बीच चुनाव आवश्यक हो गया। चुनाव में सीतारमैया की हार हुई। उन्हें मात्र 1376 मत मिले जबकि सुभाष को 1575 मत मिले। गांधी और काँग्रेस का दक्षिणपंथी गोष्ठी इस हार से बुरी तरह घबड़ा गया। उसे अपने नेतृत्व के लिए संकट स्पष्ट रूप से नजर आने लगा। गांधी ने तो यहाँ तक कहा कि "सुभाष के प्रतिद्वन्द्वी की हार मेरी हार है।" काँग्रेस वर्किंग कमिटी के 15 सदस्यों में से जवाहरलाल समेत 12 सदस्यों ने इस्तीफा दे दिया। दक्षिणपंथी एवं वामपंथी सुभाष के बीच मतभेद इतना अधिक बढ़ गया कि काँग्रेस के पुनः विभाजन का खतरा पैदा हो गया। इस दुर्घटना को बचाने के लिए सुभाष ने अप्रैल 1939 ई० में अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दिया।

Scanned with CamSc

अब डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद अध्यक्ष बनाये गए। सुभाष ने कॉंग्रेस के भीतर फारवर्ड ब्लाक की स्थापना की। कॉंग्रेस ने उन्हें किसी भी पद पर तीन वर्षों ~~से~~ के लिए ~~किसी भी पद पर~~ बने रहने के योग्य रोक दिया। एवं बंगाल कॉंग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पद से भी हटा दिया। 3 जुलाई 1940 ई० को सुभाष को भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत कलकत्ता में गिरफ्तार कर लिया गया।

भारत से पलायन और आजाद हिन्द फौज का गठन →

सुभाष बोस को कलकत्ता की प्रेसीडेंसी जेल में बन्द कर दिया गया। नवम्बर 1940 ई० में उन्होंने जेल में ही अनशन आरम्भ कर दी। उनकी बिगड़ती स्थिति को देखकर दिसम्बर में उन्हें जेल से रिहा कर कलकत्ता के उनके मकान में ही नजरबन्द कर दिया गया। 17 जनवरी 1941 ई० को वह पुलिस को धोखा देकर छद्मवेश में कलकत्ता एवं भारत से बाहर निकल भागे। वह पेशावर होते हुए काबुल गए। वहाँ से रूस होते हुए बर्लिन पहुँचे। बर्लिन में वे हिटलर के प्रमुख सहयोगी रिबेन्ट्रोप के साथ बातें कर बर्लिन रेडियो से ब्रिटिश विरोधी प्रचार एवं जर्मनी में भारतीय युद्ध बंदियों के सहयोग से आजाद हिन्द फौज के गठन का सुझाव रखा जिसे सरकार ने स्वीकार कर लिया, लेकिन जर्मन सरकार सुभाष के इस प्रस्ताव से सहमत नहीं हुई कि जर्मनी इटली और जापान संयुक्त रूप से भारत की स्वतंत्रता की घोषणा करेंगे। जर्मनी में बोस को नेताजी की भी उपाधि मिली। नेताजी जर्मन सहयोग से भारत पर रूस के रास्ते आक्रमण करना चाहते थे। उन्होंने जर्मनी में भारतीय सैनिकों के दो दस्तों का भी गठन किया। रोम और पेरिस में उन्होंने 'स्वतंत्र भारत केन्द्र' भी स्थापित किया।

बोस का जापान पहुँचना और अस्थायी सरकार की स्थापना →

1941 ई० के उत्तरार्द्ध में जापान को युद्ध में तेजी से सफलता मिली। सिंगापुर, मलाया, बर्मा अंग्रेजों के हाथ से

सुभाष ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। क्योंकि जापान में अनेक युद्धबंदी भारतीय सैनिक थे। जिनकी सहायता से अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह एवं युद्ध चलाया जा सकता था।

इसी बीच मलाया में अंग्रेजी सेना की हार हुई। एक भारतीय सेनाअधिकारी कप्तान मोहन सिंह के नेतृत्व में जिन्होंने मलाया में हार के पश्चात् आत्मसमर्पण कर दिया था, आई० एन० ए० का गठन रास बिहारी बोस के प्रयासों से हुआ। सिंगापुर के पतन के बाद 40,000 भारतीय सैनिक युद्धबंदी बने। इन सबों को आजाद हिन्द फौज में भर्ती करने की योजना बनी। 1 सितम्बर 1942 ई० को औपचारिक रूप से फौज का गठन हुआ। मोहन सिंह इसके प्रधान सेनापति बने।

सुभाषचन्द्र बोस एक पनडुब्बी द्वारा 13 जून 1943 ई० को टोकियो पहुँचे। जापान के प्रधानमंत्री तोजो ने सुभाष का स्वागत किया। 4 जुलाई 1943 ई० को रासबिहारी बोस ने पूर्वी एशिया के भारतीय स्वतंत्रता आन्दो- का नेतृत्व सुभाष को सौंप दिया। नेताजी ने फौज और लीग का नेतृत्व उत्तरदायित्व संभाल लिया। उन्होंने स्वतंत्र भारत की अस्थायी सरकार बना और फौज लेकर भारत जाने की घोषणा की। उन्होंने दिल्ली चलो का नारा दिया। अक्टूबर 1943 ई० को सिंगापुर में स्वतंत्र भारत की अस्थायी सरकार का काम होगा वह संघर्ष करना और चलाना जो भारत की भूमि से अंग्रेजों और उसके दस्तों को निकाल सके... हम भारत की स्वतंत्रता के लिए अपने झंडे के गिर्द इकट्ठा होने और आक्रमण करने के लिए भारतीय जनता का आह्वान करते हैं। इस संघर्ष अंतिम विजय तथा आखिरी जीत में पूरे विश्वास के साथ तब तक चलाने के लिए जब तक दुश्मन को हिन्दुस्तान की जमीन से निकाल नहीं दिया जाता और भारतीय जनता एक बार फिर आजाद कौम नहीं बन जाती।"

सैनिक कार्रवाइयाँ →

अब सुभाष बोस जापानी सहयोग से भारत पर आक्रमण की योजना बनाने लगे। उन्होंने ब्रिटेन और अमेरिका के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी। जापान ने अंडमान और निकोबार द्वीप अस्थायी सरकार को सौंप दिया। बोस ने उनका नाम बदलकर 'शहीद' और 'स्वराज्य' कर दिया और वहाँ का प्रशासन अपने हाथों में ले लिया। शाहनवाज खाँ के सेनापतित्व में फौज भारत-बर्मा सीमा पर मित्र राष्ट्रों की सहायता से

Scanned with CamSc

तिरंगा झंडा फहराया। इस बीच सन् 1945 ई० में युद्ध में जापान की स्थिति बिगड़ने लगी। अतः उसे जापान को वापस करना पड़ा। अंग्रेजों ने जापान के हार के बाद आजाद हिन्द फौज के सैनिकों एवं अधिकारियों पर अत्याचार करना शुरू कर दिया। अनेक सैनिक मार डाले गए तथा कितने ही गिरफ्तार किए गए। बदली परिस्थितियों में जापानी सरकार चीन का प्रशासन [illegible] थी। [illegible] अतः भारत विजय का इसका स्वप्न अधूरा ही रह गया। सुभाष को भी रंगून छोड़ना पड़ा। [illegible] ताइवान में [illegible] 18 अगस्त 1945 ई० को सुभाष की मृत्यु हो गयी।

आजाद हिन्द फौज के अधिकारियों पर मुकदमा →

विश्वयुद्ध में जापान की पराजय और युद्ध की समाप्ति के पश्चात सरकार ने आजाद हिन्द फौज के अधिकारियों पर मुकदमा चलाने का निश्चय किया। उनपर राजद्रोह और विश्वासघात का आरोप लगाया गया। नवम्बर 1945 ई० में दिल्ली के लाल किला में कर्नल शाहनवाज, कर्नल ढिल्लों और कैप्टन सहगल पर मुकदमा चलाया गया। सरकार के इस कार्य की तीखी प्रतिक्रिया एवं विरोध हुआ। उनको सजा दिए जाने के विरोध में जन प्रदर्शन हुए, जुलूस निकाले गए। कलकत्ता में प्रदर्शनकारियों ने सेना और पुलिस का मुकाबला किया। सारे देश में इन नेताओं की रिहाई की मांग की जाने लगी। अनेक काँग्रेसी भी जो सुभाष के विरोधी थे सरकारी कार्रवाई का विरोध कर रहे थे। कांग्रेस की तरफ से भूलाभाई देसाई, तेजबहादुर सप्रू, कैलाशनाथ काटजू, जवाहरलाल नेहरू इत्यादि सेना के अधिकारियों की पैरवी कर रहे थे। यद्यपि मुस्लिम लीग ने इस मामले में निरपेक्षता की नीति अपनायी, परन्तु आसफ अली सरीखे अनेक मुसलमान नेता भी उनकी रिहाई की मांग कर रहे थे। इन जबर्दस्त आन्दोलनों एवं प्रदर्शनों की सरकार अवहेलना करने की स्थिति में नहीं रह गयी थी। अतः दोषी साबित होने पर भी सरकार को इन अधिकारियों को रिहा करना पड़ा। यह भारतीयों की

युद्ध करने के लिए भेजी गयी। मार्च 1944 ई० की रातों में फौज ने कोहिमा
बाजार के निकट गाडोक नामक भारतीय चौकी पर कब्जा कर लिया। कोहिमा पर भी फौज ने
राष्ट्रीय तिरंगा फहराया तथा राष्ट्रीय गीत गाया।
तिरंगा झंडा फहराया। इस बीच मई 1944 ई० से युद्ध में जापान की स्थिति
बिगड़ने लगी। तभी से जापान को वापस करना पड़ा। अंग्रेजों ने जापानियों
के ही साथ आजाद हिन्द फौज के सैनिकों एवं अधिकारियों पर अत्याचार
करना शुरू कर दिए। अनेक सैनिक मारे गए। कितनों को गिरफ्तार
किए गए। बदलती परिस्थितियों में जापानी सरकार फौज को पूरा सहयोग
नहीं दे सकी। अतः भारत विजय का इसका स्वप्न अधूरा ही रह गया।
सुभाष को भी रंगून छोड़ना पड़ा। टोकियो जाते समय हवाई जहाज में
आग लग जाने से 18 अगस्त 1945 ई० को सुभाष की मृत्यु हो गयी।

आजाद हिन्द फौज के अधिकारियों पर मुकदमा →

विश्वयुद्ध में जापान की पराजय और युद्ध की समाप्ति के
पश्चात सरकार ने आजाद हिन्द फौज के अधिकारियों पर मुकदमा चलाने
का निश्चय किया। उनपर राजद्रोह और विश्वासघात का आरोप लगाया
गया। नवम्बर 1945 ई० में दिल्ली के लाल किला में कर्नल शाहनवाज,
कप्तान ढिल्लो और लेफ्टीनेंट सहगल पर मुकदमा चलाया गया, सारे देश में
सरकार के इस कार्य की तीखी प्रतिक्रिया एवं विरोध हुआ। उनको सजा दिलाने
के विरोध में जन प्रदर्शन हुए, जुलूस निकाले गए। कलकत्ता में प्रदर्शनकारियों
ने सेना और पुलिस का मुकाबला किया। सारे देश में इन नेताओं की रिहाई की
मांग की जाने लगी। अनेक कांग्रेसी भी जो सुभाष के विरोधी थे सरकारी कार्रवाई
का विरोध कर रहे थे। कांग्रेस की तरफ से भूलाभाई देसाई, तेजबहादुर सप्रू, कैलाश
नाथ काटजू, जवाहरलाल नेहरु इत्यादि इन सेना के अधिकारियों की मुकदमें की
पैरवी कर रहे थे। यद्यपि मुस्लिम लीग ने इस मामले में निरपेक्षता की नीति
अपनायी परन्तु आसफ अली सरीखे अनेक मुसलमान नेता भी इनकी रिहाई
की मांग कर रहे थे। इन जबर्दस्त आन्दोलनों एवं प्रदर्शनों की सरकार अब
अवहेलना करने की स्थिति में नहीं रह गयी थी। अतः दोषी साबित होते हुए भी
सरकार को इन अधिकारियों को रिहा करना पड़ा। यह भारतीयों की
बहुत बड़ी विजय थी।

बोस एवं फौज के कार्यों का मूल्यांकन →

यद्यपि बोस और फौज अपने
उद्देश्यों में सफल नहीं हो सके फिर भी बोस और आजाद हिन्द फौज ने भारत
में जिन राष्ट्रवादियों की हताश भावना को दृढ़ता बँधाया जो निराशा के
... सैनिकों ने सेना के जवान और भारतीय जनता के ... प्रेरणा ...

Scanned with CamScanner

उन्होंने ईरान की सेना, राजनीतिक स्थिती ... महत्त्वपूर्ण परीवर्तन किये। आन्तिरिक ... तथा एवं साधाणिक संगरचना सांस्कृतिक विकास, आवागमन के साधनों आदि में महत्त्वपूर्ण परीवर्तन कर ईरान को एक सुव्यवस्थित एवं स्थिर तथा प्रगतिशील राष्ट्र की कोटी में लाकर खड़ा किया। ईरान की आन्तिरिक स्थितीयों में सुधार के बाद रज़ाशाह पहलवी का ध्यान ईरान की वैदेशिक नितीयों के तरफ गया एवं वैदेशिक नीति के क्षेत्र में भी उन्होंने महत्त्वपूर्ण परीवर्तन किये

→ ईराक, टर्की एवं अफगानिस्तान से सम्बन्ध : रज़ाशाह पहलवी ने वैदेशिक क्षेत्र में शान्ति एवं व्यवस्था तथा मित्रता की नीति का अनुसरण किया। वस्तुतः उसके पूर्ववर्ती ईरानी शासकों में युद्धोपरान्त शान्ति सम्मेलन में विशाल रूसी प्रोफेसर ईरानी अधीकृत तुर्कीस्तान एवं ब्रिटीश अधिकृत बहरीन पर अपना दावा पेश किया था। परन्तु रज़ाशाह ने इस दावे की ओर कोई ध्यान नहीं दिया उसने मित्र, पड़ोसी एवं दूरवर्ती देशों से भी मित्रता की नीति का अनुसरण किया। पड़ोसी टर्की एवं अफगानिस्तान के बीच एक मैत्री सन्धि हुई। रूस ने भी इस सन्धि का अनुमोदन किया। परन्तु कुरदों के मामले को लेकर टर्की एवं ईरान के बीच मतभेद रहा। 1930 में कुरदों के विद्रोह के कारण

दोनों के बीच
यह मामला और भी गम्भीर बन गया। फिर भी दोनों के बीच 1932 ई. में
वार्ता जारी रही। मुस्तफा भी शान्ति का समर्थक था। अतः 1932 ई. में
ईरान ने ईराक एवं तुर्की से सीमा सम्बन्धी समझौता कर लिया।
1932 में ईराक के शाह फैजल ने ईरान की यात्रा की। ईरान ने
भी 1934 में तुर्की की यात्रा की एवं दोनों के सम्बन्ध मजबूत हो
गए। इतना ही नहीं बल्कि 1937 में ईरान, ईराक, तुर्की एवं
अफगानिस्तान के बीच सुदरवाद की सन्धि हुई। इस सन्धि के
द्वारा एक गठबन्धन की स्थापना हुई एवं वैदेशिक क्षेत्र में इन्होंने
आपसी सहयोग तथा परामर्श की नीति का अनुसरण किया तथा एक
दूसरे पर आक्रमण न करने का सङ्कल्प किया। इस प्रकार पूर्वी मित्र
संघ (साल सन्धि) की उत्पत्ति हुई। पूर्वी मित्र संघ के अनुसार इन दोनों
देश के आपसी शान्ति, परामर्श एवं सहयोग का सम्बन्ध
स्थापित हुआ।

(iii) राजा शाह पहलवी और पश्चिमी देश : राजाशाह पहलवी ने
पूर्वी देशों के जैसा ही पश्चिमी देशों के साथ भी मित्रतापूर्ण
सम्बन्ध बनाने का प्रयास किया। वास्तव में ईरान में रूस एवं इंग्लैंड का
परम्परागत स्वार्थ बना हुआ था। ब्रिटेन की अंग्ल ईरानी तेल कम्पनी
खुर्दीस्तान में अपना कारखाना स्थापित किया जिसके कारण ईरान
से इसका आर्थिक सम्बन्ध था। ईराक के साथ भारतीय साम्राज्य
की निकटता एवं ईरान की खाड़ी पर ब्रिटीश अधिपत्य ने ब्रिटीश
स्वार्थों को और भी महत्वपूर्ण बना दिया था। युद्धोपरान्त ईरान
में भी ब्रिटीश संरक्षण शासन का अन्त हो गया था। इस प्रकार
इस दिशा में भी ईरान, इंग्लैंड का पड़ोसी देश था तथा दूसरी तरफ
रूस भी 1921 की सन्धि द्वारा ईरान में हस्तक्षेप करने का प्रमुख
अधिकारी था। कैस्पियन सागर में दोनों देशों का संयुक्त नियंत्रण
था। इससे अतिरिक्त पड़ोसी होने से रूस का परम्परागत स्वार्थ
ईरान में बना हुआ था। अतः राजाशाह को इन दोनों देशों के साथ
निश्चित सम्बन्ध स्थापित करना अनिवार्य था और उसने मैत्रीपूर्ण
सम्बन्ध भी स्थापित करने की योजना बनायी। इन
दोनों के अतिरिक्त ईरान ने जर्मनी के साथ भी अच्छे सम्बन्ध स्थापित
किए।

Scanned with CamSc

(iv)

ब्रिटेन एवं ईरान के बीच सम्बन्ध -

ईरान ने रजा शाह पहलवी के नेतृत्व में ब्रिटेन के साथ भी अच्छे सम्बन्ध स्थापित किये थे। 1933 में ईरान और ब्रिटेन के बीच बेहरीन बहराइन तेल क्षेत्र को लेकर मतभेद हो गया था। बहराइन पर ब्रिटेन अपना कब्जा कर रखा था। रजा शाह ने बहराइन द्वीपो को ब्रिटेन से माँग लिया था। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों के कारण भी ईरान को ज्यादा सफलता नहीं मिली। अतः रजाशाह के प्रयास ब्रिटेन से दक्षिण ईरान के तेल निकालने के प्रश्न पर हुआ। ब्रिटेन को दक्षिणी ईरान में तेल निकालने का एकाधिकार प्राप्त हुआ। 1932 मे ईरान के रजा शाह ने ओनेवलाइ की आंग्ल-ईरानी तेल कम्पनी को दी गई सुविधाये प्राप्त की जाती है। ये सुविधायें 1961 तक निश्चित कि गई थी। इस कारवाही से इंग्लैंड मे खलबली मच गई और ब्रिटिश सरकार ने इंग्लैंड की खाड़ी में अपने सैनिको को भेज दिया। अन्त में आपसी मेल मिलाप के फलस्वरूप मामला अन्तिम रुप से समाप्त हो गया। और कम्पनी को कुछ सीमित शर्तो पर सीमित सुविधाये दी गई। कम्पनी की सुविधा क्षेत्र एक लाख वर्ग किमी. कर दिया गया। इस प्रकार द्वितीय विश्व युद्ध के आरम्भ होने तक दोनो देशो के सम्बन्ध अच्छे रहे। 1933 की समझौता रजाशाह की कुटनिती सफलता थी अपने सुझबूझ से ईरान को काफी हद तक ब्रिटीश प्रभाव से मुक्त कर दिया गया।

रूस एवं ईरान के साथ सम्बन्ध - प्रथम विश्व युद्ध के बाद ईरान एवं रूस के बीच वैदेशिक सम्बन्ध का आधार 1921 की सन्धि थी। रूस ने ईरान के साथ समय के सम्बन्ध को अन्त तक कर सौहार्द पूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया था परन्तु यह सम्बन्ध बहुत दिनो तक कायम नहीं रह सका। सोवियत फौजो ने कैस्पियन सागर के तट पर भी गिलान नामक जगह पर कब्जा कर लिया था। तथा वहाँ आयुक्सों का विद्रोह साम्यवाद का समर्थक विद्रोह था। रूस ने साम्यवाद के प्रचारक अपने दूत ईरान में भी भेजे। इसी के परिणाम स्वरूप ईरान में 1921 साम्यवादी दल की स्थापना की गयी थी। इसी समय खुरासान तथा अजरबैजान मे विद्रोह हुए थे।

इस विद्रोह में रूस का हाथ था। इसी विद्रोह के बाद रूस से रजा शाह का सम्बन्ध कटु होने लगा एवं उन्होंने साम्यवादियों का दमन का आरम्भ किया। आर्थिक दृष्टिकोण से भी ईरान एवं रूस के सम्बन्ध बिगड़ने लगा। 1921 की सन्धि के अनुसार ईरान किसी को रूस द्वारा परित्यक्त अधिकार नहीं दे सकता था। अतः 1922 में जब उत्तरी ईरान में ब्रिटेन एवं अमेरिका के आर्थिक एवं खनिज सम्बन्धि सुविधायें स्वीकृत की गई तो रूस का विरोध किया। एवं रूस ने 1924 में उन सभी सुविधाओं को रद्द कर दिया। ईरान एवं रूस के विचार के कारण ही कई समस्यायें खड़ी हुई। रूस में ईरानी वस्तुओं का सबसे ज्यादा आयात होता था। अतः रूस व्यापार बहिष्कार द्वारा ईरान में आर्थिक समस्यायें उत्पन्न हो गयी। 1926 में कैस्पियन सागर में मछली उद्योग के सम्बन्ध में विवाद उत्पन्न हुआ एवं रूस ने ईरान से आयात बन्द कर दिया। अन्त में ईरान को झुकना पड़ा एवं 1927 में एक नयी सन्धि हुई एवं स्पष्टतः रूसी मांगों को स्वीकार किया गया। रूस, ईरान, ईराक को निर्यात को प्रभावित नहीं करता था जबकि जरूरत पड़ने पर अपने मालों से ईरानी बाजार को भर भी सकता था। इस प्रकार आर्थिक क्षेत्र में रूस पर अवलम्बित बढ़ता हुआ प्रभाव देखते हुए इसे दूर करने के लिए 1931 में रजा शाह ने व्यापार पर अपना आधिपत्य कायम कर लिया एवं जर्मनी से व्यापार में वृद्धि की। इस प्रकार द्वितीय-विश्व युद्ध के आरम्भ होने तक जर्मनी एवं ईरान में व्यापार में काफी वृद्धि हुई। वास्तव में रूस के साथ ईरान के सम्बन्ध बिगड़ते चले गए। रूस का साम्यवाद ईरान के लिए सदैव खतरा बनता जा रहा था। अतः सदावाद की सन्धि को भी रूस सन्देह की दृष्टि से देखता था। इस प्रकार 1933 तक रूस एवं ईरान के सम्बन्ध कटु हो गये।

जर्मनी एवं ईरानी सम्बन्ध:- ब्रिटेन एवं रूस के परम्परागत प्रभाव से अपने को मुक्त रखने के लिये रजा शाह ने

जर्मनी के साथ दोस्ती का सम्बन्ध बनाया। जर्मनी ने प्रथम युद्ध में ईरान की काफी मदद की थी। जर्मनी का उद्योग इन दिनों काफी विकसित था और ईरान के आर्थिक विकास में वो सहायता पहुँचा सकता था। साथ ही साथ एक दूरवर्ती देश होने के कारण जर्मनी रूस एवं ब्रिटेन की तरह ईरान में राजनीतिक हस्तक्षेप भी नहीं कर सकता था। अतः 1927 में ईरान के जर्मनी विशेषज्ञ विन्ट लिन्डन, गालान्द की नियुक्ती की एवं जर्मनी से इन्जीनीयरो तथा तकनीशियन को बुलाया। हिटलर के उदय के बाद इस प्रक्रिया में और भी तेजी आई। एवं इरानी उद्योग, यातायात कृषि भवन निर्माण आदि में अपूर्व सहयोग ईरान को मिला। दोनो देशो में व्यापार मे तेजी से वृद्धि हुई। 1935 में जर्मनी अर्थशास्त्र के जादूगर सक्त ने ईरान की यात्रा की। 1937 में ईरान एवं जर्मनी के बीच वायुसेवा आरम्भ हुई। 1939 मे ट्रान्स ईरानियन रेलवे का निर्माण हुआ। अब ईरान का 41% तक व्यापार जर्मनी के हाथ होने लगा। इस प्रकार द्वितीय विश्व युद्ध होने तक ईरान जर्मनी का प्रमुख केन्द्र बन गया।

Scanned with CamSc